Review Of Research
Vol. 4 | Issue. 2 | Nov. 2014
Impact Factor : 2.1002 (UIF)
ISSN:-2249-894X
Available online at www.ror.isrj.org

ORIGINAL ARTICLE

आचार्यरजनीश केशैक्षिक एवं दार्शनिक विचारों का एक अध्ययन

अनिल कुमार

प्राध्यापकए समाजशास्त्रए रा॰म॰ व॰विए बिरोहड़।(झज्जर)

सारांश – आचार्य रजनीश के अनुसारआज शिक्षक के ऊपर जितना बड़ा दायित्व है, उतना किसी के ऊपर नहीं है । शिक्षा को जितनी बड़ी भूमिका अदा करनी है, उतनी किसी को नहीं करनी है । शिक्षक को राजनीति से थोड़ा बचना पड़ेगा और शिक्षक को उपदेश छोड़कर विद्यार्थी की मनोदशा को समझना होगा । उसकी आंतरिक पीड़ा और तकलीफ क्या है ?

प्रस्तावना–

उसकी अतिरिक्त शक्ति के बहाव के उपद्रव क्या हैं ? यह उसे समझना पड़ेगा । लेकिन वह अपने मंच पर खड़े होकर उपदेश दिए जाता है कि अनुशासन होना चाहिए ये उपदेश अब कीमती नहीं होगें । शिक्षक के सामने अब एक नया काम आ गया है, कि वह अज्ञात का बोध करवाए । वह केवल इतना न बताए कि हम क्या जानते हैं, वह यह भी बताए कि हम जो भी जानते हैं वह कल व्यर्थ हो जाएगा और नए ज्ञान के नए द्वार खुल जाएगें। शिक्षक की अब तक की हमारी धारणा सिर्फ सूचनाएं डाल देनी की हैं ।

शिक्षा पर विचार

आज की शिक्षा की स्थिति को देखकर आचार्य रजनीश को बहुत अधिक कष्ट होता था । उनके अुनसार ''शिक्षा की स्थिति को देखकर हृदय में बहुत पीड़ा होती है । शिक्षा के नाम पर जिन परतंत्राओं का पोषण किया जाता है उनसे एक स्वतंत्र और स्वस्थ मनुष्य का जन्म संभव नहीं है ।

मनुष्य जाति जिस कुरूपता और अपंगता में फंसी है, उसके मूलभूत कारण शिक्षा में ही छिपे हैं । शिक्षा ने प्रकृति से तो मनुष्य को तोड़ दिया है, लेकिन संस्कृति उससे पैदा नहीं हो सकी है, उल्टे पैदा हुई है विकृति । इस विकृति को ही प्रत्येक पीढ़ी नयी पीढ़ियों पर थोपे चली जाती है और फिर जब विकृति ही संस्कृति समझी जाती हो तो कोई आश्चर्य नहीं है और जब पाप पुण्य के वेश में प्रकट होता है, तो अत्यंत घातक हो जाता है।''

आचार्य रजनीश कहते है ''मैं भी शिक्षा के वस्त्रों को उघाड़कर ही देखना चाहूँगा । इसमें आप बुरा तो ना मानेगें? विवशता है, इसलिए ऐसा करना आवश्यक है । शिक्षा की वास्तविक आत्मा को देखने के लिए उसके तथाकथित वस्त्रों को हटाना ही होगा, क्योकि अत्यधिक सुंदर वस्त्रों में जरूर ही कोई अस्वस्थ तथा कुरूप आत्मा वास कर रही है । अन्यथा मनुष्य का जीवन इतनी घृणा, हिंसा तथा अधर्म का जीवन नहीं हो सकता था । जीवन के वृक्ष पर कड़वे तथा विषाक्त फल देखकर क्या गलत बीजों के बोये जाने का स्मरण नहीं आता है ? बीज गलत नहीं तो वृक्ष पर गलत फल कैसे आ सकते हैं ? वृक्ष का विषाक्त फलो से भरा होना बीज में व्यापत और भरे हुए विष के अतिरिक्त ओर किस बात की खबर है ?

रजनीश कहते हैं शिक्षाशास्त्र से भी मेरी दृष्टि भिन्न तथा विरोधी हो सकती है । मैं न तो शिक्षाशास्त्री हूँ न ही समाजशास्त्री। किंतु यह सौभाग्य की ही बात है, क्योंकि जो जितना अधिक शास्त्र को जानते हैं उनके लिए जीवन को जानना उतना ही कठिन हो जाता है । शास्त्र सदा ही सत्य के जानने में बाधा बन जाते हैं । शास्त्र से भरे हुये चित्त में चिंतन समाप्त हो जाता है । चिंतन के लिए तो निर्भय और पक्षपात मुक्त चित्त होना चाहिए । शास्त्र और सिद्धान्त पक्षपात पैदा करते हैं और तब जीवन और उसकी समस्याओं के प्रति निष्पक्ष और निर्दोष दृष्टि नहीं रह जाती है । शास्त्र जिसके लिए महत्वपूर्ण है, उसके समक्ष समाधान समस्याओं से भी ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाते हैं । वह समस्याओं के अनुरूप समाधान नहीं, वरन समाधानों के अनुरूप ही समस्याओं को देखने लगता है । इससे जो मूढ़तापूर्ण स्थिति पैदा होती है, उससे समाधानों से समस्याओं का अंत नहीं, अपितु और बढ़ोतरी होती है । मनुष्य का पूर इतिहास ही इसका प्रमाण है ।

यदि शिक्षा व्यक्ति के चित्त को इतना बोझिल, जटिल और बूढ़ा कर दे कि उसका जीवन से सीधा संपर्क छिन्न भिन्न हो जाये तो वह शुभ नहीं है । बोझिल और बूढ़ा चित्त जीवन के आनन्द, ज्ञान और सौंदर्य, सभी से वंचित रह जाता है ।

ज्ञान पर विचार :

ज्ञान और ज्ञान में भेद है । एक ज्ञान है - केवल जानना, जानकारी, बौद्धिक समझ और एक ज्ञान है अनुभूति - प्रज्ञा जीवंत प्रतीति । एक मृत तथ्यों का संग्रह है व एक जीवित सत्य का

बोध है। दोनों में बहुत अन्तर है । भूमि और आकाश का, अंधकार और प्रकाश का । वस्तुत: बौद्धिक ज्ञान, ज्ञान नहीं है, वह ज्ञान का भ्रम है । क्या अंधे व्यक्ति को प्रकाश का कोई ज्ञान हो सकता है ? बौद्धिक ज्ञान वैसा ही ज्ञान है । ऐसे ज्ञान का भ्रम अज्ञान को ढक लेता है । वह आवरण मात्र है । उसके शब्दजाल और विचारों के धुंए में अज्ञान विस्मृत हो जाता है । यह अज्ञान से भी घातक है, क्योंकि अज्ञान दिखता हो तो उससे ऊपर उठने की आंकाक्षा तो पैदा होती है । पर वह न दिखे उससे मुक्ति होना संभव ही नही रह जाता है । तथाकथित ज्ञानी अज्ञान में ही नष्ट हो जाते हैं । ज्ञान से सीखना नही होता, उसे उघाडना होता है ।

रसल ने ज्ञान के दो हिस्से किए हैं ज्ञान और परिचय । ज्ञान तो सिर्फ एक ही बीच का हो सकता है वह मैं हूँ, बाकी सब परिचय है ज्ञान नहीं ।

अनुशासन पर विचार :

आचार्य रजनीश कहते हैं शिक्षा निश्चय ही ऐसे आधार पर हो सकती है जो मनुष्य को स्वतंत्र बनाए । अनुशासित व्यक्ति अब नहीं चाहिए । स्वतंत्र और स्वयं के विवेक को उपलब्ध व्यक्ति चाहिए । उनमें ही आशा है और उनमें ही भविष्य है ।

अनुशासन की प्रणालियों ने क्या किया है ? मनुष्य में जडता और बुद्धिहीनता लाई है । अनुशासित व्यक्ति जड़ तो होगा ही । असल में जो जितना जड़ है उतना ही अनुशासित हो जाएगा । देखो यंत्र व मशीनें कितने अनुशासित है? विवेक सदा ही हाँ नहीं कह सकता है । उसे नहीं कहना भी आना चाहिए । उसकी हाँ में भी तभी मूल्य और अर्थ है जब वह नहीं भी कहना जानता हों । लेकिन अनुशासन नहीं शब्द कहना नहीं सिखाता है । वह तो सदा ही हाँ की अपेक्षा करता हैं । कहा जाए गोली चलाओ तो गोली चलायेगा । ऐसी जड़ता की शिक्षा के कारण ही तो दुनिया में युद्ध, हिंसा और भांति भांति की मूर्खताएं चलती रहती है और चल रहीहै।

आचार्य रजनीश कहते हैं कि क्या इस दुष्ट चक्र को अब भी नहीं तोड़ना है । क्या अणु युद्ध के बाद ही अनुशासन लाने वाली शिक्षा बंद होगी । लेकिन तब तो बंद करने की कोई जरूरत ही नहीं होगी, क्योंकि तब न तो अनुशासक ही बचेंगें और न अनुशासित ही। मनुष्य के भविष्य के लिए अनुशासित बुद्धि के लोगों से जितना खतरा है, उतना किसी और से नहीं । क्योंकि वे केवल आज्ञायें मानना ही जानते हैं । अणु अस्त्रों को चलाने के लिए भी आज्ञाशील व्यक्ति सदा तैयार और तत्पर रहता हैं । काश अनुशासन की जगह विवेक सिखाया गया होता, आज्ञाकारिता की जगह विचार सिखाया गया होता तो निश्चय ही दुनिया बिल्कुल दूसरी तरह की हो सकती थी ।

शिक्षा अनुशासन देने को नहीं, आत्म विवेक देने को है । वही शुभ और मंगलदायी हो सकता है । क्योंकि उस अनुशासन का फिर शोषण नहीं किया जा सकता । धर्म पुरोहितों और राजनीतिज्ञों के हाथ में हिंसा और युद्ध के लिए उसे उपकरण नहीं बनाया जा सकता । उसके आधार

पर हिंदू को मुसलमान से नहीं लड़ाया जा सकता है और न राष्ट्रो की झूठी और कल्पित सीमाओं पर ही रक्तपात के तांडव नृत्य किये जा सकते हैं । अनुशासन और आज्ञाकारिता के नाम पर मनुष्य से क्या नहीं करवाया गया है ? समाज, शिक्षक के द्वारा नयी पीढ़ी को इसी भाँति अनुशासित करने का काम लेता है ।

शिक्षक पर विचार :

आचार्य रजनीश के अनुसार, आधुनिक शिक्षक के सम्बन्ध में कुछ कहना कठिन है । इसलिए कठिन है कि शिक्षक आज से पहले कभी दुनिया में था ही नहीं । गुरू होते थे, वे शिक्षक से भिन्न थे । शिक्षण उनका धंधा या व्यवसाय नहीं था बल्कि उनके आनंद का स्त्रोत था । शिक्षण पहली दफा धंधा बना है । और जिस दिन शिक्षण बन जायेगा, उस दिन शिक्षक विद्यार्थियों का सही मार्गदर्शन कर पाएगा । असल में कभी सोचा ही नहीं गया था कि शिक्षण भी कभी धंधा बन सकता है लेकिन अब बन गया है और उसका परिणाम जो हुआ है कि शिक्षण संस्थायें फैक्ट्रियों और कारखानों से ज्यादा नहीं रह गई है ।

आचार्य रजनीश कहते हैं – कि शिक्षक का और समाज का संबंध अब तक अत्यंत खतरनाक सिद्ध हुआ है । सम्बन्ध क्या है शिक्षक और समाज के बीच आज तक ? सम्बन्ध यह है कि शिक्षक गुलाम है और समाज मालिक है । शिक्षक से समाज यह काम लेता है कि उसकी पुरानी ईर्ष्यायें, पुराने द्वेष, उसके पुराने विचार, वह सब जो हजारों वर्षो से लादे है मनुष्य के मन पर, शिक्षक नये बच्चों के मन में उनको प्रविष्ट करा दे । मरे हुए लोग, मरने वाले लोग जो वसीयत छोड़ गए हैं, चाहे वह ठीक हो या गलत, उसे वह नये बच्चों के मन में प्रवेश करा दे । समाज शिक्षक से यह काम लेता है और शिक्षक यह काम करता है, यह आश्चर्य की बात है । इसका अर्थ यह हुआ कि शिक्षक के ऊपर एक बहुत बड़ा लांछन है। बहुत बड़ा लांछन यह है कि हर सदी जिन बिमारियों से पीड़ित होती है उन बीमारियों को शिक्षक आने वाली पीढ़ियों में संक्रमित कर देता है, जो समाज चाहता है ।

इस कारण समाज शिक्षक का आदर भी करता है । क्योंकि बिना खुशामद किये शिक्षक से कोई काम लेना असंभव है । इसलिए कहा जाता है कि शिक्षक जो है वह गुरू है, आदरणीय है, उसकी बात मानने योग्य है, उसका सम्मान किया जाने योग्य है । क्यों ? क्योंकि जो समाज अपने बच्चों में अपने मन की सारी धारणाओं को छोड़ जाना चाहता है, इसके सिवाय उसका कोई मार्ग नहीं । जैसे हिंदू बाप अपने बेटे को भी हिंदू बनाकर ही मरना चाहता है, मुसलमान बाप अपने बेटो को मुसलमान बनाकर मरना चाहता है । हिंदू बाप का मुसलमान से जो झगड़ा था वह भी अपने बच्चे को दे जाना चाहता है । यह कौन देगा ? यह कौन संक्रमित करेगा ? यह शिक्षक करेगा ।

इसका परिणाम यह होता है कि दुनिया में भौतिक समृद्धि तो विकसित होती जाती है लेकिन मानसिक शक्ति विकसित नहीं हो रही है । मानसिक शक्ति विकसित हो ही नहींसकती जब तक

कि हम अतीत के भार और विचार से बच्चों को मुक्त न करें । एक छोटे से बच्चे के मस्तिष्क पर दस हजार साल के संस्कारों का भार है । उस भार के नीचे उसके प्राण दबे जाते हैं ।

आचार्य रजनीश कहते हैं – शिक्षकों की तो सब जगह तकलीफ यही है कि विद्यार्थी सम्मान तो दे रहा है, लेकिन आदर नहीं दे रहा है । शिक्षक को आदर की आकांक्षा भी छोड़ देनी चाहिए या फिर गुरू होने की हिम्मत जुटानी चाहिए । जो हमारे आदर को अपनी और खींच लेता है या जिसे आदर दिए बिना कोई रास्ता ही नहीं है, उसे ही गुरू कहते है ।

आचार्य रजनीश कहते हैं कि भविष्य में शिक्षक को आदर के ख्याल को छोड़कर प्रेम के ख्याल पर आना पड़ेगा और मेरा मानना है, प्रेम आदर से ज्यादा मूल्यवान है । क्योंकि प्रेम में आदर तो समाविष्ट है, लेकिन आदर में जरूरी रूप से प्रेम समाविष्ट नही होता। प्रेम में बड़ी वैल्यू है, आदर उतना बड़ा नहीं है । हमें जिसका आदर करना पड़ता है, उससे हम घृणा ही करते हैं । लेकिन जिससे हम प्रेम करते, उसे हम किसी गहरे अर्थो में आदर भी करने लगते हैं । प्रेम तो सादर समाविष्ट हो सकता है । लेकिन आदर में जरूरी नहीं कि प्रेम समाविष्ट हो ।**विद्यालय पर विचार**

रजनीश कहते हैं- विद्यालय जीवन जीने की कला सिखाता है । इसका कुल विज्ञान है जीने की कला । इसमें बहुत सी बातें हैं क्योंकि जीवन बहुआयामी है । लेकिन पहला कदम तुम्हें समझ लेना चाहिए । तुम्हें पूर्णरूप से खुला, ग्रहणशील होना चाहिए ।

विद्यालय का कार्य है कि गुरू बोले या मौन रहे, तुम्हारी ओर देखे या कोई संकेत करे, या बंद आंखों से मात्र बैठा रहे- वह ऊर्जा का एक क्षेत्रफल नित्त कर देता है, और अगर तुम ग्राहक हो, यदि तुम खुले हुए उपलब्ध हो, यदि तुम अज्ञात की यात्रा पर जाने को तैयार हो तो तुम्हें सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो जायेगा ।

वह कहते है कि एक बार तुम देख लो, अनुभव कर लो, एक बार तुम गुरू की ऊर्जा में मग्न हो लो तो एक नये ही व्यक्ति का जन्म होता है ।

रजनीश के दर्शन की आज के युग में प्रासंगिकता :

विश्व के प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्रियों में भारत के जिन महान् शिक्षा शास्त्रियों, विचारकों का नाम आदर के साथ लिया जाता है, उनमें आचार्य का रजनीश का भी प्रमुख स्थान है । आचार्य रजनीश ने अपने नूतन विचारों से भारत को ही नहीं अपितु पूरे पश्चिम को भी हिला कर रख दिया था । आचार्य रजनीश पश्चिम विचारकों में सिग्मंड फ्रायड से और भारतीय विचारकों में चार्वाक मुनि से, भगवान् बुद्ध एवं भगवान श्री कृष्ण से प्रभावित थे । अत: स्पष्ट है कि अपने जीवन में उन्होंने संपूर्ण विश्व के लगभग सभी महान् ग्रन्थों का विशद अध्ययन किया ।

आचार्य रजनीश कुछ अर्थो में प्रकृतिवादी थे । वे बालक की प्राकृतिक स्वतंत्रता के पक्षधर थे । वे जीवन के प्राकृतिक स्वरूप को पसंद करते थे और अपने शिष्यों को ऐसा ही जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा देते थे । उनका मानना था कि बच्चों की शिक्षा उनकों ध्यान में रख कर ही दी जानी चाहिए अर्थात बालकों की शिक्षा अनिवार्य रूप से बाल केन्द्रित होनी चाहिए ।

वे बालकों का प्राकृतिक विकास चाहते थे । उनका मानना था कि सामाजिक रीति रिवाजो में दबकर बालक कुंठित नहीं होने चाहिए। उनका मानना था कि जिस प्रकार अधिक मिट्टी डालने पर बीज अंकुरित नहीं हो पाता है, उसी प्रकार कुंठाओं व चिंताओ में दबकर बालकों के गुणों का विकास नहीं हो पाता है । जब वे प्राकृतिक आचरण के द्वारा इस प्रकार की कुंठाओं से मुक्त होंगे तो उनमें अपने आप ही एकाग्रता विकसित होने के कारण उनका बहुआयामी विकास संभव हो सकेगा ।

आचार्य रजनीश का विचार था कि हमें शिक्षा को इतिहास केन्द्रित बनाने की बजाय भविष्योन्मुखी बनाना चाहिए । उनहोनें तकनीकी एवं व्यवसायिक शिक्षा पर बल दिया ।

उनके विचारों के कारण ही नैतिक शिक्षा को एक अलग विषय के रूप में पढ़ाया जाता है । पाठयक्रम में स्थान देने के संबंध में विचार किया जा रहा है । आचार्य रजनीश के उपरोक्त विचारों को शिक्षा में उनके महत्वपूर्ण योगदान के रूप में देखा जा सकता है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भेद, स्वामी, ज्ञान ओशो द रिवेलियस, इनलाईटेन्ड मास्टर, फ्यूजन पुस्तकें । (2006)
2. ओशो, स्वतन्त्रता का आनन्द, डायमण्ड पब्लिकेशन्स । (2005)
3. ओशो, एक महान चुनौती, डायमण्ड पब्लिकेशन्स । (2003)
4. नीरव, सुरेश, शिक्षा के रहस्य, ताओ पब्लिकेशन्स । (2006)
5. ओशो, एकमात्र उपाय : जागो, डायमंड पॉकेट बुक्स ।(2006)
6. ओशो, अभिनव धर्म, डायमंड पॉकेट बुक्स ।(2004)
7. ओशो, आत्मा-पूजा उपनिषद, डायमंड पॉकेट बुक्स ।
8. ओशो, नारी और क्रान्ति, डायमंड पॉकेट बुक्स ।(2002)
9. ओशो, नए समाज की खोज, डायमंड पॉकेट बुक्स ।(2001)
10. श्याम दुआ, रजनीश- स्वर्णिम जीवन टिनी टॉट पब्लिकेशन (2004)
11. एस. एस. माथुर, शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार, आगरा पब्लिकेशन (2005)
12. आर. ए. शर्मा शिक्षा के तकनीकी आधार, रखेजा पब्लिकेशन (2007)
13. The Golden gate, Jaico Publication (2006)